بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

हमारा परिचय

मुसलमानों का सब से बड़ा दुर्भाग्य यही है कि उनके उलेमा को जिस बात से सर्वाधिक रोका गया, उन्हों ने उसी मामले में अल्लाह और उसके रसूलﷺ की सब से ज़्यादा अवज्ञा और अवहेलना की। मुसलमानों के मुफ़तियों, इमामों और उलेमा को यह ताकीदी हुक्म था कि वो *उम्मत* (मुस्लिम समुदाय) की एकता और अखंडता को हर क़ीमत पर बनाये रखें, किसी भी *'कलिमा गो'* (*'कलिमा'* पढ़नेवाले) *'अहले किबला'* (मुसलमानों के *किबला* की तरहफ़ मुँह करके नमाज़ आदा करने वाले) मूसलमान को *काफ़िर* न कहें। कुरआन शरीफ़ में यह स्थायी आदेश है :

لَا تَقُولُوا لِمَنْ أَلْقَىٰ إِلَيْكُمُ السَّلَامَ لَسْتَ مُؤْمِنًا

यानि अपना इस्लाम ज़ाहिर करने के लिये ''जो तुम्हें *'अस्सलामु अलैकुम'* कहे उसे यह मत कहो कि तू ईमानवाला नहीं''। (4:94)

और अल्लाह के रसूलसल्ल ने फ़रमाया :

قَالَ رَسُولُ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ: "مَنْ صَلَّى صَلَاتَنَا وَاسْتَقْبَلَ قِبْلَتَنَا وَأَكَلَ ذَبِيحَتَنَا فَذَلِكَ الْمُسْلِمُ الَّذِى لَهُ ذِمَّةُ اللَّهِ وَذِمَّةُ رَسُولِهِ فَلَا تُخْفِرُوا اللَّهَ فِي ذِمَّتِهِ''

''जिस ने हमारी नमाज़ जैसी नमाज़ पढ़ी, और नमाज़ में हमारे *'किबला'* की तरफ़ मुँह किया, और हमारे ज़िबह किये हुए जानवर खाये, तो वह पक्का मुसलमान *(अल्–मुस्लिम)* है, उसको अल्लाह और उसके रसूलसल्ल की *ज़मानत* (गारंटी) हासिल है। सो तुम इन लोगों की ज़मानत को तोड़ अल्लाह के विश्वासघाती न बनो।''

(अल–बुख़ारी, 8:28)

मुसलमानों के सब से बड़े इमाम, हज़रत इमाम अबू हनीफ़ह (अ॰र॰) ने तो यहांतक कह दिया है :

''अगर किसी व्यक्ति में 99 वजहें (कारण) कुफ़्र की हों सिर्फ एक वजह इस्लाम की हो (यानि वह *कलिमा* पढ़ता हो), तो उसे मुसलमान समझा जाए।'' *('सीरत नोमान', अल्लामह शिबली)*

और यह बात भी सभी को तसलीम है कि अगर किसी आदमी के बयान की एक से अधिक व्याख्याएं हो सकती हों तो उसी व्यख्या को क़बूल किया जाये जो सब से ज़्यादा इस्लामी शिक्षाओं के अनुकूल हो।

अफ़सोस! हमारे उलेमा ने हर दौर में इन ताकीदी हुक्मों को बुरी तरह उपेक्षित कर दिया। मामूली मामूली बातों पर निस्संकोच कुफ्र के फ़तवे जारी कर दिये। परिणाम यह कि आज दुनिया का कोई भी मुसलमान *फ़िरका* (समुदाय) ऐसा नहीं कि जिस को काफ़िर न कहा गया हो।

जमाअतों और फ़िरकों की बात छोड़िये, मुस्लिम जगत की वो सब महान हस्तियां जिनको आज हम इज़्ज़त और सम्मान की नज़र से देखते हैं, वो सब भी अपने दौर के उलेमा की नज़र में तुच्छतम और मानहीन व्यक्तित्व थे। अल्लामा हाली *मरहूम* ने *'मुकफ़्फ़िर'* ('मुसलमानों को काफ़िर कहने वाले) उलेमा की इस अन्यायपूर्ण प्रवृत्ति के लंबे और काले इतिहास को कमाल दक्षता से इस शियर में समो दिया है :

اُمت کو چھانٹ ڈالا کافر بنا بنا کر

اسلام پر عزیزو! احسان ہے تمہارا

उम्मत को छांट डाला काफ़िर बना बना कर

इस्लाम पर अज़ीज़ो! एहसान है तुम्हारा

(*'उम्मत'*, संपूर्ण मुस्लिम समुदाय; *'अज़ीज़ो'*, प्यारो)

इस के विपरीत इस्लाम एक ऐसी अद्भुत, सुखद एवं सुदृढ़ अन्तरराष्ट्रीय बिरादरी की स्थापना करता है जिस में इन्सान सिर्फ एकमात्र अल्लाह के आगे जवाबदेह है किसी मुल्ला–मुफ़्ती के सामने नहीं। इस में किसी बड़े से बड़े मौलवी या मुफ़्ती को यह हक़ हासिल नहीं कि वो किसी *'कलिमा गो–अहले किबला'* मुसलमान को काफ़िर करार देकर इस्लाम के दायरे से बाहिर निकाल दे।

यह तभी मुम्किन होगा जब सभी मुसलमान कुराअन शरीफ़ और हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] की मूल–शिक्षाओं की ओर वापस लौट आयें। जिसका सारांश एक खुदा, एक रसूल[सल्ल], एक कुरआन और एक किबला है। जिसमें अन्य सभी *'फ़रोयी'* (अमौलिक) मतभेदों को नज़रांदाज़ कर दिया जाता है। कहना न होगा कि वैचारिक मतभेद ही वास्तव में राष्ट्र की उन्नति उसके जीवित होने की असल कसौटी हैं, क्योंकि नवीन विचारों के मंथन से ही प्रगति की राहें खुलती हैं। हां! इस मामले में इस बात का विषेश ध्यान रखना ज़रूरी है कि मामला इस्लाम की मौलिक शिक्षाओं

के प्रतिकूल न हो। इसी नीति को दृष्टिगत रखते हुए अल्लाह के रसूल[सल्ल] ने फ़रमाया था :

''मेरी *उम्मत* (धर्मसमुदाय) का वैचारिक मतभेद *'रहमत'* यानि प्रभु का महा वरदान है''।

इस *रहमत* को *ज़हमत* (अभिशाप) न बनने दें।

कुरआने करीम में अल्लाह सुबहान व तआला ने मुसलमानों का मौलिक कर्तव्य यह बाताया है :

وَ كَذٰلِكَ جَعَلْنٰكُمْ اُمَّةً وَّسَطًا لِّتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَى النَّاسِ وَيَكُوْنَ الرَّسُوْلُ عَلَيْكُمْ شَهِيْدًا

''और इसी तरह हम ने तुम्हें एक उत्तम गरोह बनाया ताकि तुम अन्य सभी लोगों के पथप्रदर्शक बनो और रसूल तुम्हारा पथप्रदर्शक हो (2:143)''

इस आयत में साफ़ इशारा *''ख़तम ए नुबूवत''* की ओर है। यानि अल्लाह (स॰व॰त॰) ने हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल] द्वारा धर्मविधान का पूर्तिकरण तो कर दिया लेकिन अब इसका सार्वभौम प्रचार व प्रसार बाक़ी है। और यह काम क़यामत तक तमाम मुसमानों को सौंपा गया है। इस कर्तव्यपालन में ही इस्लाम धर्म और मुसलमानों की प्रतिष्ठा और सफलता का राज़ छिपा हुआ है। इसी मकसद की प्राप्ति और मुसलमानों को उनका भूला हुआ कर्तव्य याद दिलाने के लिये हम न हमारा यह वैब साइट स्थापित किया है।